प्रेम रामायण

लेखक: अनिल गोयल

महरषि वाल्मीकि की रामायण ने पिछले लगभग सात-आठ हजार वर्षों में कितने ही रूप धारे हैं. हर काल में वाल्मीकि–रचित इस महाकाव्य को हर कोई अपने तरीके से सुनाता चला आया है. इसकी मंच-प्रस्तुतियों ने भी शास्त्रीय से लेकर लोक-मानस तक हजारों रंग भरे हैं. पारसी शैली की रामलीला को देख कर भारत की कितनी ही पीढ़ियाँ भगवान राम की इस कथा को मन में धारती आई हैं. कुमाँऊँनी रामलीला से लेकर कोटा क्षेत्र के पातोंदा गाँव, ओड़ीसा की लंकापोड़ी रामलीला और हरियाणा में खेली जाने वाली सरदार यशवन्तसिंह वर्मा टोहानवी की रामलीला जैसी कितनी ही सांगीतिक रामलीलाओं की लम्बी परम्परा हमारे यहाँ है. भारत ही नहीं, विदेशों में भी इसकी अनेकों प्रस्तुति-शैलियाँ पाई जाती हैं. इंडोनेशिया में बाली की रामलीला की तो अपनी अलग ही मनोहर शैली है.

हमारे देश में भी कलाकार रामलीला को अपनी दृष्टि से मंच पर प्रस्तुत करने के नित नये तरीके और शैलियाँ ढूँढ़ते रहते हैं. प्रवीण लेखक, निर्देशक और निर्माता अतुल सत्य कौशिक ने, जो

प्रशिक्षण से एक चार्टर्ड अकाउंटेंट और अधिवक्ता हैं, अपने नाटक ‘प्रेम रामायण’ में प्रेम की दृष्टि से इस महाकाव्य की विवेचना की है. रामायण की अपनी व्याख्या पर आधारित नाटक ‘प्रेम रामायण’ का प्रदर्शन अतुल ने 5 अक्टूबर 2022 को दिल्ली के कमानी प्रेक्षागृह में किया. उनकी इस नाटक की यह पच्चीसवीं या छब्बीसवीं प्रस्तुति थी, जोकि हिन्दी रंगमंच के लिये एक गर्व का विषय है.

हमारे यहाँ प्रेम-भाव का प्रयोग प्रायः कृष्ण-कथाओं की प्रेम-मार्गी प्रस्तुतियों में किया जाता है. परन्तु अतुल ने बाल्मीकि की रामायण के मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम के जीवन पर आधारित रामायण को प्रेम के भाव की प्रस्तुति का माध्यम बनाया है, जहाँ रामायण के चरित्र ईश्वरीय अवतार होने के साथ-साथ अपने मानवीय रूप, स्वभाव और संवेदनाओं के संग नजर आते हैं.

Atul Satya Kaushik

इसकी प्रेरणा उन्हें कैसे मिली, इसके उत्तर में वे कहते हैं, “मैं किसी एक प्रोजैक्ट के लिये बाल्मीकि रामायण पढ़ रहा था, और क्रौंच-वध के प्रसंग को पढ़ते हुए मुझे लगा कि इस महाकाव्य की उत्पत्ति तो एक प्रेम-आख्यान से हुई है. तो रामायण की विभिन्न कथाओं में प्रेम को ढूँढ़ने की प्रेरणा मुझे इसी आदि-काव्य से

मिली !”

इसके लिये उन्होंने रामायण में छुपी पाँच प्रेम-कथाओं को चुना है. प्रेम-कथाओं के इन पन्नों में से सबसे पहले वे एक लगभग अनजानी सी कहानी ‘अकाल’ ले कर आते हैं, जिसमें श्रीराम की बड़ी बहन, दशरथ और कौशल्या की पुत्री शान्ता और उनके पति ऋषि श्रृंगी या ऋष्यश्रृंग की कहानी दिखाई गई है. दूसरी कहानी ‘रथ से निकला पहिया’ कैकेयी और दशरथ की जानी-पहचानी कहानी है. तीसरी कहानी ‘स्वर और शान्ति’ में वे सीता और राम के मन की संवेदनाओं की कथा सुनाते हैं. इसके बाद ‘उल्टी करवट मत सोना’ में लक्ष्मण और उर्मिला की कहानी देखने को मिलती है. और अन्त में, ‘उस पार’ के माध्यम से सुलोचना और मेघनाद की करुण प्रेम-कथा के दर्शन होते हैं.

विरह या अपने प्रिय से अलगाव ही प्रायः प्रेम-आख्यानों का आधार रहता है. इन पाँच में से शान्ता की कहानी के अतिरिक्त अन्य सभी चार कहानियाँ अपने-अपने कारणों से जन्मे उसी विरह की वेदना को दर्शाती हैं. सभी कहानियों में स्त्री-मन की अथाह गहराइयों को दर्शाने का प्रयास स्पष्ट नजर आता है, जिसके लिये अतुल कभी-कभी इन कथाओं की अपने अनुसार विवेचना भी कर लेते हैं.

दशरथ के मित्र और अंगदेश के स्वामी राजा रोमपद ने शान्ता को पाला था. युवा होने के उपरान्त परिस्थितियोंवश एक बार शान्ता का सामना ऋषि श्रृंगी या ऋष्यश्रृंग से हुआ. ऋष्यश्रृंग ने अपने पिता विभान्तक या विभंडक के क्रोध से शान्ता की रक्षा की, और उसी क्षण शान्ता ऋष्यश्रृंग की हो गई! (इन ऋषि विभंडक के नाम पर ही आज का मध्य प्रदेश का भिंड नगर बसा हुआ है!) ऋष्यश्रृंग ने भी जीवन के हर क्षण में शान्ता को अपने साथ रखा, उसे पूरी बराबरी का सम्मान दिया! शान्ता के जीवन के उन्हीं क्षणों का चित्रण अतुल ने पूरी कुशलता के साथ किया है.

‘स्वर और शान्ति’ में अतुल ने सीता और राम के मन की ध्वनि को एक अनूठे ही तरीके से सुनाया है. अतुल की सीता अयोध्या की सीता नहीं हैं, वे मिथिला की बेटी सीता हैं, मन से एक चंचल बालिका, सुकोमल भावनाओं से ओत-प्रोत, कर्तव्यों के गाम्भीर्य के बीच अपने मन की संवेदनाओं के कोमल स्वरों को भी सुनने वाली सीता. अयोध्या के राम जितने शान्त थे, मिथिला की सीता उतनी ही चपल और चंचल थीं. आज भी मिथिला और नेपाल के गीतों में उनका यही रूप अधिक प्रचलित है, जनकपुर की बेटी का रूप! राम का स्वरुप भी यहाँ अयोध्या के युवराज का नहीं, बल्कि मिथिला के जामाता का है, जिसके साथ ठिठोली भी की जाती है! सीता के इसी स्वर, और राम के गहन-गम्भीर, शान्त स्वभाव की कथा है यह कथा! यह प्रेम रामायण है, तो उसमें अतुल ने कलात्मक स्वतन्त्रता लेकर सीता की प्रचलित एकदम गम्भीर, आदर्श छवि से हट कर, सीता को अपने पिता की लाडली बेटी, एक बच्ची के रूप में दिखाने का प्रयास किया है!

लेकिन पूरे नाटक में सबसे अधिक मार्मिक और करुणा भरे क्षण रहे लक्ष्मण और उर्मिला की विदा के क्षण! मैथिलीशरण गुप्त ने भी अपने महाकाव्य ‘साकेत’ के नवम सर्ग में घर में रह कर वनवासिनी का जीवन जीती उर्मिला की कहानी कही है. आसन्न विरह के आभास और सीता के वनवास जाने से उत्पन्न हुए कर्त्तव्य के बीच अद्भुत सन्तुलन

बनाती हुई उर्मिला… इन चारों बहनों में से सबसे बड़ी सीता तो वन चली गईं . अब बाकी तीनों में उर्मिला ही सबसे बड़ी हैं. तीन सासें तो अपने वैधव्य को भोग रही हैं. उन तीनों सासों की, अपनी दोनों छोटी बहनों की, दोनों देवरों की, और इतने बड़े राजभवन की सम्पूर्ण जिमेवारी अब उर्मिला की हो जाने वाली है. लेकिन इन सब कर्त्तव्यों के बीच उसका अपना आसन्न विरह भी तो है, जिसे न चाह कर भी उर्मिला ने स्वीकार कर लिया है. लेकिन लक्ष्मण के वन जाने के पहले वह एक बार लक्ष्मण से मिल कर अपने को अयोध्या के राजभवन के अपने चौदह वर्षों के वनवास के लिए तैयार कर लेना चाहती है. वह वन-गमन की तैयारी करते लक्ष्मण को बुला भेजती है.

लक्ष्मण एवं उर्मिला दोनों को ही पता है कि उनका यह मिलन एक क्षणिक मिलन-मात्र है। उर्मिला के उलाहनों से प्रारम्भ हुए इस अल्पकालीन मिलन में दोनों में से कोई भी अपने अन्तर के ज्वार भाटे से दूसरे को अवगत नहीं करा पाता है। उन दोनों को ही पता है कि दोनों को अगले चौदह वर्षों का भीषण वियोग सहना है। उर्मिला का उर अश्रुओं से गीला है। लेकिन जाते हुए वह लक्ष्मण को दुःख नहीं देना चाहती… अतः अपनी चपलता को बनाये रखने का असहज सा प्रयास करती है. गरिमा और दीप्ति का आविर्भाव इस बालिका, उर्मिला में अभी होना बाकी है. मायके में माता-पिता, और अयोध्या में सीता के संरक्षण में पली-बढ़ी उर्मिला अभी तक एक चपला बालिका भर ही तो रही है…

अतुल के लक्ष्मण ने ऐसे एकाकी क्षणों के लिये अपनी उर्मिला को ‘मिला’ नाम दिया है. वे आते हैं, और अपनी ‘मिला’ से पूछते हैं, “तुम्हें क्या बात करनी है?”

ये कुछ क्षण आसंग विरह के पूर्वरंग के समान हैं. दोनों ही सोच रहे हैं कि क्या बात करें, कैसे एक-दूसरे से विदा लें. वह भी लक्ष्मण के साथ वन जाना चाहती है, परन्तु उसे पता है कि यह सम्भव नहीं है… उसका विराट कर्त्तव्य उसके सामने नजर आ रहा है. लेकिन कर्त्तव्य के साथ-साथ उसका अपना विरह भी तो है… एक नन्हा सा, कोमल भावनाओं से भरा हृदय भी तो उसके पास है! यहाँ पर अतुल ने उर्मिला को एक छोटी सी, लगभग नन्हीं सी नवविवाहिता किशोरी के रूप में दिखाया है, चौदह वर्षों का लम्बा विरह जिसके आगे प्रस्तुत होने को ही है! वह कहती है, “मुझे? मुझे क्या बात करनी है?”

लक्ष्मण कहते हैं, “मैं चौदह वर्ष के लिये वन जा रहा हूँ और तुम्हें मुझसे कोई बात नहीं करनी?”

उर्मिला आज इन कुछ पलों में जैसे अपने आने वाले चौदह वर्षों को जी लेना चाहती है, अपने सायास ओलाहनों से बातचीत को सहज करने का प्रयास करती, “तुम्हें भी कहाँ करनी है बात! तुम तो सुनते ही तैयार भी हो गये, जैसे प्रतीक्षा में थे कि कब अवसर आये और तुम मिला से दूर जाओ। मैं बहुत लड़ती हूँ ना तुमसे!”

लक्ष्मण तो ठहरे सदा के गम्भीर! लेकिन अपने कर्तव्यों के बीच उन्हें उर्मिला के उर में समाते जा रहे विरह का भान भी था. वे उस चंचला से बोले, “तुम कहाँ लड़ती हो। कदाचित लड़ने के कारण मैं ही देता हूँ तुमको। अब चौदह वर्ष का समय मिला है तो सोचूँगा कहाँ सुधार हो सकता है।”
दोनों का वार्तालाप चलता रहता है, स्तब्ध बैठे दर्शक सुनते रहते हैं, अपने अश्रुओं को रोकने का असफल प्रयास करते हुए…
लेकिन आसन्न विरह के इस क्षण में उर्मिला उतनी चंचला भी नहीं रह पाती, जिसका प्रयास वह अब तक कर रही थी! वह नन्हीं सी बच्ची, वह चंचला किशोरी अब अपने लक्ष्मण को उपदेश दे रही है, “… आज मुझे लड़ना नहीं है। सुनो, तुम ना… भैया-भाभी की सेवा में, कुछ अपना ध्यान भी रख लेना। खिला के भैया-भाभी को कुछ अपने नाम भी रख लेना। समय पे उठना, समय पे खाना, उल्टी करवट मत सोना। याद मेरी आ भी जाये, भैया के आगे मत रोना।”
‘उल्टी करवट मत सोना…’ उस दिशा में शैया पर उर्मिला होती थी! अब जब वह वहाँ नहीं होगी, तो लक्ष्मण को अपनी मिला की याद आयेगी, उन्हें सन्ताप होगा! अपने विरह से बड़ा उस मानिनी के लिये है अपने प्रिय के विरह का भान!

लेकिन विरह-सन्ताप के साथ-साथ इस सीता-भगिनी को कर्त्तव्य-बोध भी

है ! ‘याद मेरी आ भी जाये, भैया के आगे मत रोना।’ अपने व्यक्तिगत सन्ताप के क्षणों में भी कर्त्तव्य-बोध के होने का इससे बड़ा उदाहरण और क्या हो सकता है ! दोनों के बीच वार्तालाप सतत प्रवाहमान है . प्रेक्षागृह का वायुमण्डल प्रेक्षकों की निस्तब्ध साँसों और आँखों की नमी से बोझिल होता चला जाता है . लक्ष्मण कहते हैं, “मिला … ना राम को, ना सीता को, ना लक्ष्मण को ये श्राप मिला। यदि सच में मिला किसी को तो उर्मिला को ये वनवास मिला। मिला, तुम महलों में रह कर भी वनवास का जीवन भोगोगी। मोर के संग मोरनी को देखोगी, तो भी रो दोगी। पर आह, दुर्भाग्य। मेरी मिला का वनवास ना वतर्मान याद रखेगा, ना इतिहास। उर्मिला का वनवास कोई याद नहीं रखेगा।”

लेकिन उर्मिला को अपने लक्ष्मण पर अटूट विश्वास है, “झूठ कहते हो, कोई याद रखे या ना रखे, मिला का वनवास, लक्ष्मण याद रखेगा। रखेगा ना।” और फिर दोनों ही अपने को रोक नहीं पाते … संयम के सारे बांध टूट जाते हैं … दोनों गले मिल कर फफक कर रो पड़ते हैं। उर्मिला का लक्ष्मण पर यही अटूट विश्वास बहुत वर्षों के बाद लक्ष्मण को रूपवती राक्षसी सूर्पणखा से दूर रखने में सफल होता है ! सावित्री की कथा इतिहास में कितनी बार दोहराई गई है ! नाटक के लेखक, निर्देशक और प्रस्तुतकर्ता अतुल सत्य कौशिक ने अपने नाटक को कथावाचक के फॉर्मेट में तैयार किया है . मंचाग्र में दाहिने हाथ पर कुर्सी पर बैठ कर अतुल पूरी कथा के सूत्र को अपने हाथ में थामे, एक कुशल नाविक की भांति दर्शकों को इस कथा-गंगा की यात्रा करवाते हैं . इस कथा-यात्रा की पतवार हैं नृत्य और सजीव गायन, जिसमें लोक से लेकर शास्त्रीय तक सबका समायोजन अतुल ने किया है . अंजली मुंजाल की अत्यन्त सुन्दर और प्रीतिकर नृत्य-संरचनाओं को सुष्मिता मेहता और साथियों ने कत्थक नृत्य के द्वारा प्रस्तुत किया .

एक घंटे और चालीस मिनट के इस नाटक को अतुल ने केवल तीन कलाकारों सुष्मिता मेहता, अर्जुन सिंह और मेघा माथुर के द्वारा प्रस्तुत किया है, जो दृश्यों के अनुसार विभिन्न चरित्रों को बारी-बारी से निभाते हैं . नाटक के आकर्षण का प्रमुख आधार-स्तम्भ है लतिका जैन का गायन . दूसरा स्तम्भ है नाटक में नृत्यों का प्रयोग . आज हिन्दी रंगमंच में गायन और नृत्य का प्रयोग लगभग समाप्त हो चुका है . कविता, गीत, गानों, गजल इत्यादि के माध्यम से निर्देशक ने विभिन्न भावों और संवेदनाओं को दिखाया है . मैथिल सुहाग-गीत

‘साँवर साँवर सुरतिया तोहार दुलहा, गोरे गोरे लखन… दुलहा’, अवधी के विदाई गीत ‘काहे को ब्याही बिदेस’, रामनिवास जाजू की हिन्दी कविता, और हिन्दी, उर्दू, फारसी, बृजभाषा इत्यादि के एक प्रसिद्ध गीत जेहाल-ए-मिस्कीं इत्यादि को प्रयोग करके अतुल ने आज के समय में एक साहसिक प्रयोग किया है… जिसकी बानगी हमने बापी बोस के नाटक ‘आषाढ़ का एक दिन’ में भी देखी थी. कुछ लोग इस नाटक को डांस-ड्रामा या नृत्य-नाटिका का नाम देंगे. मैं इस प्रकार के पश्चिमी वर्गीकरण के विरुद्ध हूँ… हमारे नाट्यशास्त्र में कलाओं को एक समग्र तरीके से देखने का प्रावधान है, ना कि उन्हें एक-दूसरे से अलग करके देखने का, जो मुझे ज्यादा उचित लगता है. अतुल के सैट की परिकल्पना में भी कहीं अल्पना जैसी पारम्परिक शैलियों की झलक मिलती है.

नाटक में प्रकाश-व्यवस्था तरुण डांग ने और ध्वनि-व्यवस्था दीप्ति ग्रोवर ने सम्भाली थी. संगीत निर्देशन अनिक शर्मा का रहा. गायन जीवन्त था, लेकिन संगीत कराओके था, क्योंकि, ‘संगीतकारों को साथ लेकर चलना सम्भव नहीं हो पाता!’, अतुल कहते हैं. हिन्दी रंगमंच की यही विडम्बना है, कि एक प्रस्तोता को कितने ही समझौते करने पड़ते हैं!